वैदिक शिक्षा प्रणाली का आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव

डॉ. देवराज
सहायक आचार्य, संस्कृत
अन्तर्राष्ट्रिय दूरवर्ती शिक्षा एवं मुक्त अध्ययन केन्द्र
हि. प्र. विश्वविद्यालय शिमला – 5

भारत विश्व का प्राचीनतम देश है। इसकी संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। ज्ञान–विज्ञान में भारत का अद्वितीय स्थान था। विश्व के सभी ज्ञानपिपासु ज्ञानार्जन के लिए भारत की ओर आते थे। भारत इसी कारण से विश्वगुरु कहलाता था। भारतीय शिक्षा का आरम्भ प्रकृति की गोद में मानव की मूलभूत जिज्ञासा की शान्ति के लिए हुआ था। भारत में शिक्षा के तत्त्व, प्रणाली तथा संगठन का स्वरूप प्रायः वैदिक युग से माना जाता है। सृष्टि के आदि वेदों के आविर्भाव से लेकर आज तक मानव को जैसा वातावरण, समाज व शिक्षा मिलती रही, वह वैसा ही बनता चला गया। इतिहास के दर्पण में झाँकते ही हमारा अपना प्रतिबिम्ब मुखरित हो उठता है। इतिहास की रेखाएँ हमारी वास्तविकता का दर्शन कराती हैं। आज इस जगतीतल में जितना बु(ि–वैभव और भौतिक उन्नति दृष्टिगोचर होती है, वह पूर्वजों की शिक्षाओं का प्रतिपफल है। अतः मानव की उन्नति की साध्किा शिक्षा है। भारत में यह निर्विवाद सत्य है कि यहाँ पर आदि साहित्य वैदिक साहित्य ही माना जाता है। शिक्षा के सम्बन्ध में जितना सुव्यवस्थित वर्णन वेदों में मिलता है उतना सम्भवतः किसी अन्य साहित्य में उपलब्ध नहीं है। वेदों में शिक्षा का सुव्यवस्थित क्रमपूर्वक और सर्वांगीण विकास के रूप में वर्णन मिलता है।

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वध्ष्टि।।
वचोविदं वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम्।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामा मा वृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः।।[1]

इन मन्त्राों में भगवान् ने मनुष्यों को उपदेश दिया है कि उन्हें अपने समाज में शिक्षा के प्रचार को कभी नहीं रुकने देना चहिए। शिक्षा के प्रचार को क्यों नहीं रुकने देना चाहिए? उसके प्रचार से राष्ट्र को क्या लाभ होते हैं? यह भी इन मन्त्राों में बड़ी सुन्दरता के साथ वर्णित किया गया है। पहले मन्त्रा में बताया गया है कि शिक्षा के प्रचार से राष्ट्र में वसु, रुद्र और आदित्य विद्वान् उत्पन्न होते हैं और उनके द्वारा उसमें अमृत अर्थात् आनन्द मंगल रूप अमृत बँधकर रहता है। इस अमृत का कभी राष्ट्र में अभाव नहीं रहता। शिक्षा का प्रचार राष्ट्र को अधेन बना देता है। वह पराधेन नहीं हो सकता, उसमें किसी तरह की क्षीणता नहीं आ सकती। इसके दूसरे मन्त्रा में बताया गया है कि शिक्षा के प्रचार से लोगों को समझ के साथ बोलना आ जाता है। किस समय कैसे वचनों का प्रयोग किया जाना चाहिए इसे समझकर वे अपने शब्दों का प्रयोग करते हैं। सब प्रकार के कर्म और ज्ञान राष्ट्र में सम्पन्न होने लगते हैं। शिक्षा के कारण से ही राष्ट्र के लोग दिव्यगुणों से युक्त होकर नाना प्रकार के व्यवहार करने वाले बन जाते हैं। छोटी समझ वाले पुरुषों को ऐसी दिव्य शक्ति सम्पन्न शिक्षा के प्रचार को रोकना नहीं चाहिए।

अथर्ववेद के पृथिवीसूक्त में भूमि के लिए एक वाक्य आया है–

विमृग्वरीं पृथिवीमा वदामि क्षमां भूमिं ब्रह्मणा वावृधनाम्।
ऊर्जं पुष्टं बिभ्रतीमन्नभागं घृतं त्वाभि निषीदेम भूमे।।[2]

अर्थात् यह हमारी मातृभूमि ब्रह्म अर्थात् महान् वृ(िकर ज्ञान द्वारा हमारी वृ(करने वाली है। ज्ञान द्वारा मातृभूमि तभी वृ(कर सकती है जब उसमें शिक्षा का प्रचार हो। उसी सूक्त में पृथिवी को '**इन्द्रगुप्ता**[3]' अर्थात् सम्राट् द्वारा परिरक्षित कहा गया है। सम्राट् सब प्रकार से हमारी मातृभूमि की रक्षा करता है। उसे राष्ट्र के शिक्षा प्रचार की भी रक्षा करनी चाहिए। सम्राट् द्वारा शिक्षा प्रचार से ही मातृभूमि हमारी रक्षा कर सकती है। अन्यथा जड़भूमि में यह सामर्थ्य कहाँ से हो सकता है? यह तो राष्ट्र में शिक्षा प्रसार के सम्बन्ध में राज्य के कर्त्तव्य की ओर सामान्य रूप से निर्देश है। वेदों में स्थान–स्थान पर शिक्षा के अनेक मौलिक सि(ान्तों की ओर भी निर्देश किया गया है। जिनका ध्यान रखने पर किसी भी राष्ट्र की शिक्षा संस्थाएँ आदर्श संस्थाएँ बन सकती हैं और उनसे शिक्षा प्राप्त करके बाहर निकलने वाले छात्रा और छात्राएँ आदर्श मानव बन सकते हैं। प्राचीनकाल में अशिक्षित मनुष्य को विद्याविहीनः पशु कहा गया है। शिक्षा को प्रकाश

का स्रोत माना गया है। वैदिककाल में शिक्षा की जो विशेषताएँ थी उनका आधुनिक शिक्षा पर क्या प्रभाव पड़ा, उसे चित्रित करने का प्रयास किया जा रहा है।

सार्वभौम अनिवार्य शिक्षा

शिक्षा के सम्बन्ध में विचार करने से पूर्व जिस बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है वह है प्रत्येक बच्चे को शिक्षा से वञ्चित न रखा जाए। वेद राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के लिए शिक्षा के पक्षपाती हैं। वेदों में सब बालक और बालिकाओं को छः से आठ वर्ष की अवस्था तक आचार्य कुल एवं गुरुकुलों में भेज दिया जाता था। बालकों को माता–पिता से पृथक् रहकर शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार बच्चे एक आयु तक माता के प्रभाव में रहते हैं, पिफर पिता के और बाद में आचार्यों के।

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद।[4]

उनकी अन्तर्निहित शक्तियों का पहले माता विकास करती है पिफर पिता और अन्त में आचार्य के पास रहते हुए शिक्षा प्राप्त करके ही वे अपना विकास करने में समर्थ होते हैं। देश में वैदिक परम्परा का निर्वहण करते हुए आज 14 वर्ष तक की आयु के बालकों के लिए सार्वभौम अनिवार्य शिक्षा का प्रावधन किया गया है।

शिक्षणालयों का परिवेश

दूसरा बिन्दु है शिक्षणालयों का परिवेश कैसा हो? इसके विषय में भी वेदों में पर्याप्त उल्लेख मिलता है। इस सम्बन्ध में यजुर्वेद में उल्लेख किया गया है–

उपह्वरे गिरीणां सर्धमे च नदीनाम्। ध्या विप्रो अजायत।।[5]

एक हलके शाब्दिक परिवर्तन के साथ **)ग्वेद**[6] में भी यही मन्त्रा आया है। इसमें कहा गया है कि पर्वतों के निकट और नदियों के संगम स्थल पर गुरुओं की प्रज्ञा और क्रिया–कुशलता द्वारा मेधवी विद्वान् तैयार होते हैं। वेद ने यह स्पष्ट निर्देश दिया है कि यहाँ शिक्षणालयों की स्थापना के लिए आदर्श स्थान सुन्दर और रमणीक पर्वतीय प्रदेश तथा नदियों के संगम स्थलों के प्रदेश है।)ग्वेद के मन्त्रा से यह निर्देश मिलता है कि शिक्षा–संस्थाएँ सुन्दर वन प्रदेशों में खोली जानी चाहिए। स्वच्छ जलवायु और रमणीक प्राकृतिक शोभा से युक्त पर्वत प्रदेशों, नदियों के तटों तथा वनों में स्थापित संस्थाओं में रहकर शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रा–छात्राओं का शारीरिक स्वास्थ्य तो उत्तम रहेगा ही, साथ में उनका मानसिक स्वास्थ्य भी उच्च कोटि का रहेगा। शिक्षा संस्थाओं के स्थान विषयक ये निर्देश एक आदर्श के रूप में हैं। शिक्षा संस्थाएँ जितना इस आदर्श के निकट जा सकेंगी उतना ही छात्राों और समाज के अध्कि हित में होगा। वेद के इन निर्देशों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा संस्थाएँ दूषित वातावरण से भरे हुए नगरों के गली–कूचों और बाजारों में न बनाकर नगरों से बाहर पर्याप्त दूरी पर बनाई जानी चाहिए। आज भी अध्कितर शैक्षणिक संस्थान शहर के दूषित वातावरण से दूर सुरम्य वातावरण में खोले जा रहे हैं।

शिक्षणालयों में क्या कुछ पढ़ाया जाए

शिक्षणालयों में क्या कुछ पढ़ाया जाए, इस सम्बन्ध में भी वेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में और अन्य अनेक स्थलों पर बड़े स्पष्ट निर्देश मिलते हैं। इस सूक्त में कहा गया है कि आचार्य ब्रह्मचारी को अपने गुरुकुल रूपी पेट में तीन रात तक धरण करता है–

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।
तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः।।[7]

यहाँ रात्रि शब्द अज्ञानान्ध्कार का सूचक है। जब तक तीन प्रकार का उसका अज्ञान दूर न हो जाए तब तक आचार्य शिष्य को गुरुकुल में रखता है। जगत् में प्रकृति, जीव और ईश्वर तीन तत्त्व हैं। इन तीनों विषयक अज्ञान को दूर करके जब तक शिष्य के मन को इन विषयक ज्ञान के प्रकाश से न भर दिया जाए तब तक आचार्यों को चाहिए कि वह शिष्य को गुरुकुल में रखकर शिक्षा देता रहे। इस प्रकार वेद निर्देश देता है कि प्रकृति, जीव और आध्यात्मिक शिक्षा विज्ञानों को पढ़ाने की व्यवस्था होनी चाहिए। ब्रह्मचारी को चाहिए कि वह पृथिवी–लोक, द्युलोक और अन्तरिक्ष–लोक को अपनी ज्ञान संग्रह की इच्छा रूप अग्नि की समिध बनाता रहे–

इयं समित्पृथिवी द्यौर्द्वितीयोतान्तरिक्षं समिध पृणाति।
ब्रह्मचारी समधि मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति।।[8]

तात्पर्य है कि पृथिवी पर अन्तरिक्ष में और द्युलोक में जितने पदार्थ हैं, तृण से लेकर सूर्य और नक्षत्रों तक विश्व ब्रह्माण्ड में जितने असंख्य पदार्थ है, उनसे सम्बन्ध रखने वाले विभिन्न शिक्षा विज्ञानों की शिक्षा का प्रबन्ध शिक्षणालयों में किया जाना चाहिए।

ये त्रिाषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधतु मे।।[9]

इस मन्त्रा में अध्येता शिष्य अपने आचार्य और परमात्मा से प्रार्थना करता है कि संसार के सभी रूपों को धरण करते हुए जो त्रिाषप्त तत्त्व सब ओर परिभ्रमण कर रहे हैं, उनके स्वरूप के ज्ञान से प्राप्त होने वाले बलों, सामर्थ्य और शक्तियों को वाचस्पति अर्थात् आचार्य और परमात्मा मुझमें धरण करें। मन्त्रा में 'त्रिाषप्ताः' पद की भाष्यकारों ने विभिन्न निरुक्तियाँ विग्रह और अर्थ दिए हैं। इन अर्थों में विश्व के विभिन्न क्षेत्राों में पाए जाने वाले सभी पदार्थों के घटक विभिन्न तत्त्वों का समावेश हो जाता है। इससे स्पष्ट होता है कि भौतिक, अध्यात्मिक सभी विद्याओं का शिक्षण संस्थाओं में दिया जाए, वेद का यह स्पष्ट संकेत है। आज के विश्व में शिक्षा के क्षेत्रा में आध्यात्मिक विद्याओं के शिक्षण की ओर ध्यान न देकर भौतिक विद्या विज्ञानों की शिक्षा पर ही बल दिया जाता है। उसके परिणामस्वरूप विश्व में जो रागद्वेष, कलह, लड़ाई–झगड़े, यु(और अशान्ति का भयंकर वातावरण बना हुआ है। यह सभी को भली–भाँति विदित है। इसलिए वेद ने आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार की शिक्षा को अनुमोदत किया है।

गुरु और शिष्य का घनिष्ठ सम्बन्ध

वेदों में गुरु और शिष्य का घनिष्ठ सम्बन्ध बताया गया है। वेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में कहा गया है कि –

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।[10]

आचार्य ब्रह्मचारी का उपनयन करके उसे गुरुकुल में प्रविष्ट करके मानों अपने गर्भ में रख लेता है। वेद की यह उपमा गुरु शिष्य के पारस्परिक सम्बन्ध पर बड़ा सुन्दर प्रकाश डालती है।

माँ के गर्भ में जब तक बच्चा रहता है तब तक बाहर का कोई प्रभाव उस पर सीध नहीं पड़ सकता। उसका तथा उसकी माँ का जीवन एकरूप रहता है। वह दो होते हुए भी वस्तुतः एक ही होते हैं। माता को ही अपने गर्भस्थ बच्चे की सर्वांगीण पुष्टि, वृ(ि, उन्नति की ही चिन्ता रहती है। उस अवस्था में वह जो कुछ भी करती है गर्भस्थ शिशु की भलाई को ध्यान में रखकर ही करती है। ऐसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध गुरु शिष्य का भी होना चाहिए। अपने शिक्षा काल में शिष्य गुरु के गर्भरूप शिक्षणालय में गुरुओं के निकट ही निवास करें। आज इस प(ति का निर्वहण पूर्ण रूप से तो नहीं किया जा रहा है अपितु आज कुछ गुरुकुलों और नवोदय विद्यालय इत्यादि में इस परम्परा का वहन किया जा रहा है।

जो पढ़ाया जाए रोचक बनाकर पढ़ाया जाए

अथर्ववेद के मन्त्राों में शिष्य अपने आचार्य से कह रहा कि हे वाचस्पति आचार्य ऐसी व्यवस्था कीजिए कि आपसे सुनकर आया हुआ ज्ञान मुझमें ही रहे, मैं उसे भूल न जाऊँ–

पुनरेहि वाचस्पते देवेन मनसा सह। वसोष्पते नि रमय मÕयेवास्तु मयि श्रुतम्।
इहैवाभि वि तनुभे आर्त्नी इव ज्यया। वाचस्पतिर्नि यच्छतु मÕयेवास्तु मयि श्रुतम्।।[11]

हे वाचस्पति आचार्य ऐसा उपाय कीजिए कि मैं आपसे सीखे हुए ज्ञान से वियुक्त न हो जाऊँ। वेद ने शिष्य के मुख से यह कहलवाकर अपनी कवितामयी शैली में यह सुझाव दिया है कि जो कुछ पढ़ाया जाए उसे बड़ा रमणीक बड़ा रोचक बनाकर पढ़ाया जाए। ऐसा करने से शिष्य पाठ को रुचि के साथ ध्यान से सुनेंगे और इस प्रकार रुचि और ध्यान से सुनी हुई चीज उनके मन पर गहरे रूप में अंकित हो जायेगी। आज इस वैदिक प(ति का निर्वहण सम्यक् रूप से किया जा रहा है। आज शैक्षणिक संस्थानों में अत्याधुनिक तकनीक से शिक्षा प्रदान करने का राज्य द्वारा प्रयत्न किए जा रहे हैं।

छात्रा नियमपूर्वक परिश्रम और मनोयोग से पढ़े

अथर्ववेद के मन्त्रा में शिष्य आचार्य से कह रहा है कि '**वाचस्पतिर्नि यच्छतु**' अर्थात् वाचस्पति आचार्य मेरे पठन–पाठन को नियमित करके रखे, नियम में बाँध्कर रखे। वेद के इस कथन से निर्देश मिलता है कि शिक्षणालय में पठन–पाठन का कार्य नियमित रूप से चलना चाहिए। उसमें किसी प्रकार ढील नहीं होनी चाहिए। ब्रह्मचर्यसूक्त में छात्राों को अपना अध्ययन किस प्रकार करना चाहिए इस सम्बन्ध में दो तीन बड़े महत्त्वपूर्ण निर्देश दिये गए हैं। एक तो यह कहा गया है कि विद्यार्थी को सदा ज्ञान संग्रह करने की तीव्र इच्छा रूप अग्नि में विभिन्न पदार्थों के ज्ञान की आहुतियाँ डालते रहना चाहिए।

इयं समित् पृथिवी द्यौर्द्वितीयोतान्तरिक्षं समिध पृणाति।
ब्रह्मचारी समिध मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसापिपर्ति।।[12]

ज्ञान की प्राप्ति की तीव्र इच्छा वाला छात्रा ही ज्ञान का संग्रह कर सकता है। छात्रों को मेखलाधरण अर्थात् कटिब(ता, जागरुकता चौकन्ना रहकर आलस्य प्रमाद को त्यागकर मनोयोग के साथ परिश्रम करते हुए अध्ययन करना चाहिए। ऐसा करने से वह ज्ञान का संग्रह करेंगे और उसमें कौशल प्राप्त कर सकेंगे। आज छात्रा कटिब(ता और मनोयोग के साथ परिश्रम करते हुए अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होते हैं।

निशुल्क व्यवस्था

ब्रह्मचर्य सूक्त में काव्यमयी भाषा में आचार्य के लिए कहा गया है कि वह शिष्य के लिए औषधि भी है, पय भी है–

आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम ओषध्यः पयः।[13]

तात्पर्य है कि आचार्य शिष्य को औषध्यिाँ भी देता है और पय भी देता है। इससे यह संकेत मिलता है कि रोगी हो जाने पर सब प्रकार की चिकित्सा तथा खाने–पीने के लिए सब प्रकार के भोजन और दूध आदि पदार्थ छात्रों को आचार्य द्वारा शिक्षणालय की ओर से मिलने चाहिए। इस कार्य के लिए शिक्षणालयों को राष्ट्र की ओर से पुष्कल आर्थिक सहायता दी जायेगी। ध्नाभाव या गरीबी के कारण राष्ट्र की कोई भी बालिका या कोई भी बालक शिक्षा से वि×चत नहीं रहने दिया जाना चाहिए। आज भी राष्ट्र की ओर से सभी को अनिवार्य शिक्षा के साथ किसी राज्य में एक निश्चित अवधि तक निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती है। आज हिमाचल जैसे राज्य में सभी पाठशालाओं में बालिकाओं को 10+2 तक निशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती है। अन्य छात्रों को भी भोजन और वर्दी तक निशुल्क वितरित की जाती है।

समानता का व्यवहार

वेद के अनुसार गुरु शिष्य को शिक्षणालय में प्रवेश करके उसे एक प्रकार से अपने गर्भ में धरण कर लेता है। उसके साथ इतना घनिष्ठ व आत्मीय सम्बन्ध बना लेता है जितना किसी माँ का अपने गर्भस्थ बच्चे के साथ होता है। इस सम्बन्ध का स्वभाविक परिणाम यह होगा कि उसका सभी छात्रों के साथ समान व्यवहार होगा। जैसा माँ अपने सभी बच्चों के साथ समान व्यवहार करती है उसी प्रकार आचार्यो को भी सभी के साथ समानता का व्यवहार करना चाहिए। वेद में मानवमात्रा को उपदेश दिया गया है कि परस्पर सबको प्रेम से मिलकर रहना चाहिए और सबको अपना खान–पान समान रखना चाहिए।

समानी प्रपा सह वो{न्नभागः समाने योक्त्रो सह वो युनज्मि
सम्य×चो{ग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।।[14]

इस प्रकार वेद द्वारा प्रतिपादित शिक्षा प(ति पराकाष्ठा की साम्यवादी है। आज भी शिक्षणालय में समानता के साथ शिक्षा वितरित की जा रही है। समाज में कुछ पिछड़े लोगों को भी उनके समकक्ष लाने के लिए आरक्षण तक की सुविध उन्हें राज्य में प्रदान की जा रही है।

वर्तमान की जड़ें अतीत में विद्यमान होती है। भारत का अतीत गौरवमय रहा है। इससे वर्तमान आलोकित हुआ है और भविष्य के प्रति आस्था उपजी है। भारत का अतीत सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक कारकों से उतना प्रभावित नहीं रहा जितना कि यहाँ की आध्यात्मिकता ने उसे प्रभावित किया है। यहाँ पर मानव का जीवन 'सर्व भूते हिता रता' रहा है। यहाँ की संस्कृति ने विश्व–बन्धुत्व तथा अति मानवता का स्वप्न देखा है, स्वप्न को साकार किया है।

प्राचीनकाल में आध्यात्मिकता से ही राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक धरायें प्रवाहित हुई हैं। सत्याचरण, प्रेम, अहिंसा आदि पर ही सामाजिक जीवन की नींव रखी गई थी। सहयोग और सह अस्तित्व उसका प्राण था। व्यक्ति समाज की आधरभूत इकाई था। जीवन का निश्चित उद्देश्य था, निश्चित आदर्श थे, भौतिक साध्नों का उपयोग इन उद्देश्यों तथा आदर्शों की पूर्ति के लिए किया जाता था। प्राचीनकाल में शिक्षा इस सि(ान्त पर आधरित थी कि अनादिकाल से भारत में शिक्षा स्वयं के लिए नहीं अपितु ध्र्म के लिए प्राप्त की जाती थी। यह मुक्ति और आत्मबोध का साध्न थी और जीवन का महान् लक्ष्य मुक्ति था।

इस संसार में मानव एक ऐसा प्राणी है जिसकी सर्वविध उन्नति कृत्रिाम है, स्वभाविक नहीं। बाल्यकाल से ही बोलने, चलने आदि की क्रियाओं से लेकर बड़े होने तक सभी प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे पराश्रित ही रहना पड़ता है। दूसरे ही उसके मार्गदर्शक होते हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि समय–समय पर विविध माध्यमों अथवा

व्यवहारों से मानव में अन्यों के द्वारा गुणों का आदान किया जाता है। यदि शिक्षा समाज में रहकर दी जा रही है तो उसका प्रभाव शिक्षार्थी पर पड़ना अवश्यम्भावी है। वह वैसा ही बनता है जैसा समाज है। प्राचीनकाल में शिक्षारूप यह उच्चकोटि का कार्य नगरों और गाँवों से दूर रहकर शान्त, स्वच्छ और सुरम्य प्रकृति की गोद में किया जाता था।

वह शिक्षा ही मनुष्य को सच्चे अर्थों में मानव बनाने का सामर्थ्य रखती है जो मानव मूल्यों पर आधरित हो, जिस शिक्षा में मानव मूल्यों का अभाव हो वह शिक्षा कभी भी मानव का निर्माण नहीं कर सकती है। शिक्षा संस्कारों का भी निर्माण करती है, यदि शिक्षा में मानव मूल्यों का समावेश है तो ऐसी शिक्षा मानव को सच्चे अर्थों में मानव को मानव बनाने का सामर्थ्य रखती है। आज मानव में संवेदना, प्रेम, सत्य, अहिंसा,दयालुता, सहिष्णुता, करुणा,दया औश्र शान्ति जैसे अनेक सद्गुणों का नितांत अभाव हो गया है। यदि मूल्य दिखाई भी देते हैं तो वह अत्यन्त अल्प मात्राा में ही दिखाई देते हैं जिसका कोई विशेष अर्थ समझ में नहीं आता है। वैदिक शिक्षा का आधर ही मानव मूल्यों पर आधरित है। इस शिक्षा का प्रत्येक अक्षर, वाक्य और सूत्रा मानव मूल्यों को पिरोता हुआ आगे बढ़ता है।

वेदों के युग में शिक्षा का स्वरूप आदर्शवादी था। ईश्वर भक्ति, धर्मिकता, आध्यात्मिकता, चरित्रा निर्माण, व्यक्तित्व के विकास संस्कृति राष्ट्र तथा समाज के विकास के प्रति अभिवृत्ति विकसित करने पर आचार्यजन बल देते थे।

संक्षेप रूप में कहा जा सकता है कि आज शिक्षा का अध्ययन यदि इतिहास की आँखों से किया जाये तो वर्तमान शिक्षा प्रणाली को दिशा मिल सकती है। हमारी दृष्टि किसी भी शैक्षिक पहलू का अध्ययन करते समय वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। शिक्षा के विकास, शिक्षा के वंशक्रम और शिक्षा की संस्कृति का अध्ययन विचार के नये द्वार खोलता है। इसीलिए वैदिक शिक्षा प्रणाली आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली का नींव का पत्थर है। उसी के आधर पर आधुनिक शिक्षा प्रणाली का विकास हुआ है। सच तो यह है कि वैदिक कालीन शिक्षा प्रणाली हमारी संस्कृति पर आधरित थी और संस्कृति से हम अलग नहीं हो सकते। आज भी शिक्षा के उद्देश्य मूल रूप से वही हैं जो वैदिक काल में थे।

1.)ग्वेद, 8/101/15–16
2. अथर्ववेद, 12/1/29
3. वही, 12/1/11
4. शतपथब्राह्मण, 14/6/10/5
5. यजुर्वेद, 26/15
6.)ग्वेद, 8/6/28
7. अथर्ववेद, 11/5/3
8. वही, 11/5/4
9. वही, 1/1/1
10. वही, 11/5/3
11. वही, 1/1/2–3
12. वही, 11/5/4
13. वही, 11/5/14
14. वही, 3/23/6